मनुष्य बनो

शुभ संकल्प,

क्षमा, प्रेम,

निष्काम कर्म

पालन.

क्षक

याल फकीरचन्दजी महाराज

मानवता मन्दिर होशियारपुर (पंजाब)

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिये जवाबीकार्ड आना चाहिए वी० पी०पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायेगी। इसका वार्षिक मूल्य २५.०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने यहाँ डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर न मिले व अगला अंक निकलने के एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय मे पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—सम्बन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिए। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ४२	मार्च-९३	अङ्क— ६

प्रेम धारा से :

शब्द

१. नर तन पाकर गुरु किया न, कैसे भरम कटायेगा...मन०
२. अन्तर मुख वृत्ति नहीं धारी, बाहर मुखी मरमारेगा...मन०
३. मालिक घट में ढूढ़े बाहर, कैसे उसको पायेगा....मन०
४. नाभि में कस्तूरी तेरे, तू जंगल दौड़ायेगा....मन०
५. मन अनुरागी बात त्यागी, कितनी बात बनायेगा....मन०
६. बातों का पकवान है झूठा, कैसे पेट भरायेगा....मन०
७. क्यों फिरता है मारा मारा, गुरु बिन कौन ठहरायेगा मन०
८. समय मिला और मिली है निधि, सत्संगत में कब जायेगा....मन०
९. बिन सत्संग विवेक न होई, चौरासी दुःख पायेगा....मन०
१०. निबे हरि भजन नही छुटकारा, गाफिल फिर पछतायेगा। .....मन

सत्संग परमसंत मानव दयाल

डा. ईश्वर चन्द शर्मा जी महाराज

आन्ध्रप्रदेश

पाके नर जीवन न समझा, तत्व को और सार को।
क्यों बुरा कहते हो तुम, ईश्वर को और संसार को ।।

बुद्धि उसने दी तुम्हें, बुद्धि की शक्ति युक्ति दी।
क्यों बिगाड़ा पा के सब, परमार्थ और व्यौहार को ।।

देवताओं से भी उत्तम, उसने तुमको कर दिया।
भरम में फँसकर न समझा, तुमने वार और पार को ।।

कर लो सतसंगत गुरु की, ज्ञान की दृष्टि खुले।
लाओ तट पर नाव अपनी, छोड़कर मँझधार को ।।

राधास्वामी की दया से, जनम को करलो सुफल।
काटो बन्धन भरम के, और त्यागो कारागार को ।।

ओंकार बिन्दुसंक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
मोक्षदं कामदं चैव ओंकाराय नमो नमः ।।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्चज् जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुज्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम् ।।

राधास्वामी !

परम आदरणीय आनन्द राव जी महाराज, मेरी अपनी ही आत्मा के स्वरूप सत्संगी भाई और बहनो, अभी महाराज

जी ने हमारे जीवन के लक्ष्य के बारे में उदाहरण बताया कि ज्ञान मनुष्य के अन्दर सबसे ऊँची वस्तु है। मानव तभी मानव है जब वह विवेक से, ज्ञान से और समझ से काम लेता है। मैंने आपके सामने जो मंगलाचरण रखा है वह हमारे ऋषियों के अनुभव के आधार पर जो ईश्वर और मनुष्य के बारे में समझा उसका निचोड़ है, सार है। ॐ शब्द व्यापक शब्द है। सभी धर्मों, हिन्दू धर्म, सनातन धर्म, आर्य समाज, बौध धर्म, जैन धर्म आदि ॐ का सहारा लेकर चलते हैं। यहाँ तक कि सिख धर्म भी ओंकार से चलता है। यही ओंकार शब्द प्रकाश है। यह ओंकार एक है। 'निर्भय निर्भओ, निरहंकार। मालिक में अहंकार नहीं है, भय नहीं है, डर नहीं है, और वास्तव में वह न पैदा होता है न मरता है। इतना अच्छा ऋषियों का दर्शन है। ओंकार शब्द को भारत के सभी धर्म मानते हैं। ओंकार ही मालिक का नाम है। मानव, खुद ओंकार स्वरूप है। ईसाई, इस्लाम तथा यहूदी धर्म भी ओंकार को मानते है। लेकिन यह ओंकार का उच्चारण अलग करते हैं। यह सब जब प्रार्थना करते हैं तो प्रार्थना के अन्त में आमिन शब्द कहते हैं। इस तरह वह ॐ का उच्चारण आमिन करते हैं। हमारी संस्कृति इतनी वैज्ञानिक है, इतनी व्यापक है कि हम ईश्वर को दो हाथ, दो पाँव वाला मनुष्य नहीं मानते बल्कि उसे पुरुष मानते हैं। इस ओंकार को नमस्कार क्यों किया? 'ओंकार बिन्दुसंक्तम्।' हमारे जीवन का लक्ष्य एक है। ओंकार के साथ जो बिन्दु लगी हुई है उसका अर्थ यह है कि हम उस ओंकार को नमस्कार करते हैं जिसमें अ उ म तीन अक्षर हैं और बिन्दु लगी है। अ उ म क्या है? जैसे महाराज जी बता रहे थे कि

मनुष्य में शरीर, मन और आत्मा अर्थात सत् चित और आनन्द है। मनुष्य ओंकार परमात्मा का स्वरूप कैसे है ?

परमात्मा के तीन शरीर हैं—ब्रह्मा, विष्णु और शिव। ब्रह्मा परमात्मा का स्थल शरीर है। यह सारा जगत जो दिखाई दे रहा है जैसे चांद, सूर्य, नक्षत्र आदि जितने भी लोक-लोकान्तर हैं वह मालिक का, ईश्वर का, परतत्व का शरीर है। ये हैं अ.कार, उकार, मकार। यह शरीर पैदा किया गया है, इसकी सृष्टि की गई है, सृजन किया गया है। हमारा शरीर भी उसका मूल है।

जब जगत् को पैदा किया तो उसका पोषण करने के लिए उस परमतत्व ने एक और शक्ति पैदा कर दी, वो विष्णु शक्ति या ब्रह्माण्डी मन।

जब भौतिक जगत् पैदा हो गया तो उसका नश भी होना जरूरी है क्यो कि वह स्थायी नहीं है लेकिन जहाँ से वह निकला था विष्णु उसी भौतिक जगत् को फिर उठा कर के शिव के अन्दर वापस ले जाता है। कहा जाता है कि शिव जी मोक्ष को देने वाले हैं। त्रिगुणात्मक जगत् के लिए तीन अक्षर हैं और यह तीनों मनुष्य के अन्दर हैं। मनुष्य का शरीर ब्रह्म है जो पैदा करता है। मनुष्य का मन विष्णु है जो पालन करता है। मनुष्य की आत्मा शिव-आनन्द है। इस प्रकार सत्, चित् आनन्द अपने ही अन्दर हैं।

एक आदमी बहुत गरीब था। वह अपने घर के बाहर गली में कुछ ढूंढ़ रहा था। किसी व्यक्ति ने पूछा कि तेरा क्या खो गया है जिसे तू ढूढ़ रहा है ? उसने कहा कि मेरा एक रुपया खो गया है। उस व्यक्ति ने पूछा कि कहाँ खोया था ? कहने लगा कि घर में खोया था। वह व्यक्ति कहने

लगा कि रुपया तो तेरा घर में खोया हैं मगर तू बाहर क्यों ढूढ़ रहा है ? कहने लगा कि मेरे घर के अन्दर अंधेरा है, बत्ती नहीं है, गली में बत्ती जल रही है इस लिये बाहर देख रहा हूँ ।

इस प्रकार सत्, चित, आनन्द तीनों आपके अन्दर हैं । यदि हम अपने जीवन के उद्देश्य को समझ कर अपने शरीर को कैसे बनायें, अपने मन को किस तरफ लगायें और अपनी आत्मा का अनुभव किस तरह करें, जब यह पता लग जायेगा तो उस परमतत्व की अनुभव अपने ही अन्दर हो जायेगा—

'ढूंढ़ मुझको अपने मन में, मैं तो तेरे पास हूँ ।'

मालिक तो कह रहा है कि मैं तेरे अन्दर हूँ, मैं अन्तर्यामी हूँ लेकिन तुम मुझे बाहर ढूढ़ रहे हो ।

ऐक अमीर आदमी की लड़की थी । उसका एक बहुत कीमती हीरे-जवाहरात का हार था । वह उस हार को कभी-२ पहना करती थी । उसने अपने जन्म दिन की पार्टी में अपनी सहेलियों को बुलाया । शाम को वह अपने कमरे गई और उसने करोड़ों रुपये की कीमत का हार निकाल कर गले में डाला हो था कि उसको दो सहेलियां आ गयीं । उनके साथ वह बातों में लग गई और यह भूल गई कि हार उसके गले में है । मब उसे हार का ध्यान आया तब वह उठकर भागी और उसने सारा घर देख लिया, शोर मचा दिया कि मेरा हार खो गया है । उन्होंने कहा कि हार तो तेरे गले में पड़ा है । जैसा ही उसने हार अपने गले में देखा, उसे आनन्द आ गया तब उसने अपना जन्म दिन मनाया । तो यही बात है कि मालिक सत्, चित्, आनन्द आपके अन्दर मौजूद है

और आप उसे चारों तरफ तलाश रहे हैं। आप पंडितों से मौलवियों से. पुजारियों से, गुरुओं से पूछ रहे हैं कि हमारा हार कहां खो गया में किन्तु वे सब आपका इसलिए मार्ग दर्शन नही कर सकते क्योंकि वह स्वयं भी नहीं जानते कि उनके गले का हार कहां है ? ज्ञान आपके अन्दर मौजूद है।

सत्, चित् आनन्द जहाँ से निकले है वह तो परमतत्व है, वो बिन्दु है।

ओंकारँ बिन्दुसंयुक्तम्.....

योगी कौन है ? जो अपने आपको स्वयं के अन्दर बैठे हुए परमतत्व से मिला दे वह योगी है। कई योगी होते हैं जो राजयोग करते हैं, हठ योग करते हैं। घरके अन्दर पत्नी अपने पति की, बच्चों की सेवा कर रही है वह भी योग कर रही है। वह किसी योगी से कम नहीं है।

एक योगी बारह वर्ष तक तपस्या करता रहा। जिस पेड़ के नीचे वह बैठा था उस पेड़ पर एक बगुली बैठी थी। उस बगुली ने बीठ कर दी वह बीठ योगी पर गिरी। योगी को जैसे ही गर्म लगा तो उसने आक्रोश से बगुली को देखा। योगी को देखते ही बगुली जलकर राख हो गई और नीचे गिर पड़ी। अब उसे यह अहंकार हो गया कि "मैं तो बहुत बड़ा योगी हूँ"। अब वह योगी उठा और शहर की तरफ गया। शहर में जाकर वह एक मकान के सामने जाकर खडा हो गया। उस मकान में एक पतिव्रता औरत और उसके बच्चें तथा पति रहते थे, पति बीमार था उसने पानी माँगा, जब तक वह पतिव्रता पानी लेकर आई, पति को नींद आ गई और वह सो गया। पतिव्रता पानी लिए खड़ी थी। योगी ने कहा कि अलख निरंजन, भिक्षा दे मायी। उस पतिव्रता

ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसका एक साल बच्चा अग्नि के के पास खेल रहा था मगर उसको उसका भी ध्यान नहीं था। बच्चा अग्नि में गिर पड़ा। लेकिन अग्नि ठण्डी हो गई। योगी यह सब देख रहा था। थोड़ी देर में उसका पति जगा तब ऊसने उसको पानी पिलाया। अब पतिव्रता उस योगी की तरफ आई। योगी ने बड़े आक्रोश से पतिव्रता की तरफ देखा। पतिव्रता ने कहा कि योगी महाराज, मैं कोई बगुली नहीं हूं जो जलकर राख हो जाऊँगी। योगी ने चौंक कर पूछा "माता ! आपको यह सब कैसे पता लगा ? पतिव्रता ने ने कहा "योगो महाराज मालिक तक पहुँचने के लिये जंगल में जाना जरूरी नहीं है। मैंने अपने गृहस्थ में रहकर अपने पति की सेवा करके वह ज्ञान प्राप्त कर लिया है। जिसे तू १२ जँगल में रहकर प्राप्त किया। अगर तू इससे ज्यादा जानना चाहता है तो फलाने गाँव में धर्म व्याध नाम का एक कसाई रहता है उसके पास चला जा।" जब वह योगी उस कसाई के पास पहुंचा तो कसाई ने कहा "अच्छा-२ योगी महोदय तुम्हें उस पतिव्रता औरत ने भेजा है"। योगी हैरान हो गया कि इस कसाई को कैसे ज्ञान हो गया। कसाई ने कहा "मैं तुम्हें बताता हूं कि मुझे कैसे ज्ञान हो गया।" कसाई योगी को घर ले गया। घर में कसाई के वृद्ध माता-पिता थे। कसाई उनकी सेवा करता था और उनको भगवान मानता था। उसने कहा "इनकी सेवा से मैं मोक्ष को प्राप्त हो जाऊँगा"।

तो क्या है ? ओंकार बिन्दुसंयुक्त नित्यं ध्यायन्ति योगिनः सभी ऋषि, मुनि उस ओंकार का ध्यान करते हैं। ओंकार लोक भी देगा और परलोक भी देगा लेकिन उससे पहले

ध्यान है। राधा लोक है, स्वामी परलोक है। राधास्वामी किसी व्यक्ति का या फिरके का नाम नहीं है। राधा आत्मा है स्वामी परमात्मा है, परमतत्व है।

राधा स्वामी हालत आपके अन्दर मौजूद है। क्या जीवन का लक्ष्य शरीर, मन, आत्मा हैं ? शरीर सेवा के लिये होता है। बूढ़े मनुष्य मालिक का रूप हैं उनकी सेवा करो। मगर आप सारी दुनिया की तो सेवा नहीं कर सकते इसलिये आप अपने घर में माता-पिता, भाई-बहनों आदि की सेवा करो मैं अपने जीवन की मिसाल देता हूँ। बचपन में मेरे माता-पिता के पास बहुत पैसा था मुझे हर प्रकार का आराम था। लेकिन पिताजी के गिरने के कारण चोट आ गई और उनकी स्मृति चली गई। बारह साल की छोटी उम्र में घर का सारा बोझ मेरे ऊपर आ गया। वह भी समय था जब रात को खाने के लिए मेरे पास रोटी नहीं होती थी। मेरी माता दो वर्ष बीमार रहीं मैंने उनकी लगातार सेवा की। ऊन्ही के आर्शीवाद से मैं पढ़ा, प्रोफेसर बना, ख्याति मिली, अमेरिका गया। मैं आपको बता रहा हूँ कि यदि आप अपने माता-पिता की सेवा करोगे तो एक दिन बहुत बड़े आदमी बनोगे। यह शिक्षा बच्चों के लिये है।

मातायें अपने गृहस्थ के अन्दर अपने पति को ईश्वर रूप मानकर चलें तो उनको कोई कष्ट न होगा। आपको शरीर इसलिये मिला है कि आप इस शरीर से किसी की सेवा करो मदद करो। मन इसलिये मिला है कि ऊससे आप मालिक से प्यार करों। एक बात आपको बताता हूं कि एक बार भगवान राम ने हनुमान से पूछा कि हनुमान तू बता कि

[शेष पृष्ठ ३४ पर]

[गतांक से आगे]

दुर्गावती—'मुझे देहली में तुम्हारी शकल सूरत देखकर भ्रम हो गया था। मैंने तुमसे सवाल भी किये थे मगर तुम टाल गये।'

गंगाराम— तो आपको अपने आप अपने प्रश्न का उत्तर मिल गया। मुझे कहने की आवश्यकता नहीं हुई।'

दुर्गावती—'प्रश्न तो ज्यों का त्यों रह गया। मुझे यह नहीं बताया गया कि यह स्वाँग किस विशेष उद्देश्य से भरा गया था।'

गंङ्गाराम—'तुम जानती हो, फिर भी हठ करती हो। मेरी अवस्था के पुरुष के लिये ऐसी बात मुख से निकालना अच्छा नहीं मालूम होता।'

दुर्गावती हँसी— तुमने सुना होगा कि संसार में तीन हठ होते हैं। राज हठ, बाल हठ और त्रिया हठ। तमने दो का तो अनुभव कर लिया होगा। अब तीसरे की बारी है।'

गंगाराम—'बहुत अच्छा अगर आप हठ पर तुली बैठी हैं तो सुन लीजिए कि मैं आपके पास रहना चाहता हूँ।'

दुर्गावती लज्जित हुई—'यदि आपको मुझे पास रखने और मेरे पास रहने का इतना ख्याल था तो देहली से वापिसी के बाद यहाँ क्यों नहीं चले आये। इतने वर्ष क्यों लगाये ?'

गंगाराम—'यह कहानी बहुत लम्बी है। मुझे बहुत काम करने थे।'

दुर्गावती—'मैं नहीं जानती, मुझमें कौन से गुण हैं।

जिनके कारण से तुमको मेरे पास रहने का इतना ख्याल है। मैं स्त्री हूं। स्त्रियां निर्बल और कम समझ प्रसिद्ध हैं। एक समय तुमने मुझे महारानी कहा। फिर उपदेश देने वाली बताया। पता नहीं आगे चलकर और क्या-क्या कहने लग जाओगे। तुम वीर हो, निःस्वार्थ हो, बुद्धिमान हो, उदार हो स्त्रियां निस्संदेह ऐसे पुरुष पर हर समय जान देती है और ऐसे पुरुष की अधीनता का दम भरती हैं। और उसके लिये सब कुछ त्यागन करने के लिये उद्यत हो जाती हैं मगर यहां तुम जैसे पुरुष का केवल साधारण स्त्री के पास रहने का इच्छुक रहना आश्चर्य की बात है। तुमने मेरे सवाल का जबाव तो दिया मगर यह नहीं बताया कि क्यों मेरे पास रहने को तुमको इतनी इच्छा है। मुझमें मो प्रत्यक्ष रूप से कोई गुण भी नहीं है।'

गंगाराम—'आप दिलेर हैं। मुझे पहले इसका प्रमाण मिल गया था। आपका हृदय बड़ा नेक है। नोकरों के साथ आपका वर्ताव अत्यन्त उदार था। आप बुद्धिमान हैं। इस समय की बात चीत इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। यदि आपकी निकटता मुझे प्राप्त हो जाये तो मेरे भाग्य का क्या कहना है, इसके सिवाय.....।'

गंगाराम कुछ और कहने को था मगर वह बूदम बनकर टाल गई। उसे ज्ञात हो गया कि अब गंगाराम खुलकर साफ ढँग से अपनी बात कह सुनायेगा। उसने उसे रोक दिया। कहा—'आप आराम करो। पिताजी से जो ठीक हो कहा सुनो।' गगाराम वहाँ से चला आया।

—०—

सत्ताईसवाँ प्रकरण

रायदेवा और नव युवक मेंना

मानुष सोई जानिये, करे मनुष का काज।
मानुष सेवा के लिये, कभी न आवे लाज ॥

सूखे वृक्षों की जड़ को जब पानी मिलता है वह लहलहा उठते हैं। धान के सूखे खेत वर्षा के पानी की बूंदों से इस प्रकार भरे हुए सुन्दर दिखाई देते हैं कि देखने वालों का चित्त उनके दृश्य से कँवल की तरह खिल जाता है। कठिन सर्दी की ऋतु के बाद बसंत ऋतु प्रकृति के कारोबार को विशेष प्रकार का सौन्दर्य प्रदान करती है। अंधेरी रात के बीतने पर सूर्योदय की किरणें पृथ्वी पर कुल संसार को प्रकाशमान कर देती है। इसी प्रकार निराशा और आशा के दम भरने वाले पुरुष को जब आशा की झलक दिखाई देती है उसकी खुशी के भाव उभर खड़े होते हैं। यही दशा उस समय रतनगढ के रहने वालों की हुई। दुर्गावती से मिलकर गंगाराम ने प्रेमविदा के देखने की इच्छा प्रगट की। भाई बहन मिले। फिर तो बोसलदेव को भी ज्ञात हो गया कि वह स्वयं ही रायदेवा ही है। भ्रम तो उसे पहले से ही से था मगर वह असमंजस में पड़ा था। यह रहस्य खुल गया। उसने फिर उसकी दया का धन्यवाद दिया। रायदेवा के नाम से उसको अति प्रेम था। वह उसे संसार में सबसे अधिक मान की दृष्टि से देखता था। देहली में उसके कार्यों को सुनकर उसके बड़प्पन का ख्याल और भी दृढ हो गया था।

रायदेवा केवल एक दो दिन का ही इरादा करके रतन-

गढ़ आया था। उसी रात को बीसलदेव ने ज्योतिषियों को बुलाकर शादी का मुहूर्त पूछा और रातोंरात प्रेमविदा का गहलौत सरदार के पुत्र (उत्तम) से जो पटहर का सरदार का सहायक था विवाह किया। उसके बाद दुर्गावती का हाथ रायदेवा के हाथ में दिया गया। विवाह हो गया। वह पति-पत्नी बन गये। हिन्दू धर्म शास्त्र के नियमानुसार उनके जोड़े मिला दिये गये। दूसरे दिन वह विदा होकर बूंदी की ओर चल दिये, क्यों कि अधिक समय तक राजधानी से दूर रहना उचित नहीं था। विशेषकर जब से मेंना शत्रु हो गये थे। हर समय खटका रहता था।

जब वह हरावती के पास पहुँचे, दो चार मेंना नव युवक मार्ग में मिले, रायदेवा ने उत्तम से कहा—'इनसे पूछो, यह कौन है ?' यह बोले—'हम मेंना हैं। बूंदी के रायदेवा की खोज में अपने सरदार जेठ की ओर से गये थे। ज्ञात हुआ कि रायदेवा रतनगढ़ गये हुए है। निराश होकर वापस जा रहे हैं।

रायदेवा उनसे मिला —मैं रायदेवा हूँ। तुमको मुझसे क्या काम है।'

मेंना—'हमारी कौम आपसे हेकड़ी करने पर लज्जित है, भूल दोनों ही ओर से हुई। अब हम आपकी सहायता के इच्छुक हैं।'

रायदेवा—'इस सहायता की क्या शकल सोची गई है ?'

मेंना—'हरावती से निकलकर हम मेवाड़ के राणा की शरण में आये। चित्तौड़ के इलाके के आस पास जहाँ जिसकी इच्छा हुई, वह वहां बस गया। रहने को स्थान तो मिला मगर राणा की शरण केवल नाम मात्र है। हमारे सरदार

जेठ हैं। वह निर्बल हैं, रैला बन में राय गंगो कीची रहता है। उसकी लूट-पाट से हम बहुत दुखी हो गये हैं। सरदार का कुछ बस नहीं चलता और न राणा हमारी सहायता करते हैं। गंगो ने हम पर एक प्रकार का कर लगाया है, जिसे वह 'बीर की दुहाई' कहता है। धारी बस्ती में हर दूसरे महीने की पूर्णमासी के दिन आता है। हम विवश होकर उसका कड़ा टैक्स ले जाकर सीमा के किनारे रख आते हैं और वह नियत समय पर आकर ले जाता है। उसका किला रामगढ़ यहाँ से पास है और बूंदी से भी दूर नहीं है।'

रायदेवा—'मैं उसे जानता हूँ। तुम चाहते क्या हो ?'

मेंना—अगर केवल टैक्स तक ही होता तो संतोष किया जाता इतनी घबराहट न होती। यद्यपि हमारे सरदार ने उसकी शर्त को मान लिया मगर उसने लूटपाट को नहीं छोड़ा। हममें उसके विरोध की शक्ति नहीं है।'

रायदेवा—'फिर क्या तुम मुझसे सहायता माँगने आये हो ?'

मेंना—'हाँ, हमारा बूंदी जाने का यही इरादा था। आप हमारी सहायता कीजिये।'

रायदेवा—'किस शर्त पर ?'

मेंना—'हम फिर आपकी शरण में आते हैं। जिस शर्त पर मेवाड़ के राणा ने हमको शरण देने का वायदा किया है। उसी शर्त का लिहाज आप भी कीजिये। हमारी जातीयता और स्वतन्त्रता को धक्का न पहुँचे। हम अपने सरदार के अधीन समझे जायें। समय पर हम और हमारे सरदार अपने आदमियों के साथ आपके शरीक रहेंगे और आप राय गंगो के अत्याचार से हमको मुक्ति दिलाइये।'

रायदेवा—'यह शर्त मुझे स्वीकार है, परन्तु ऐसा न हो कि फिर प्रतिज्ञा भंग की जावे।'

मैना—'मैना प्रतिज्ञा भंग नहीं है। आपको इसका अनुभव हो गया है। इसके सिवाय उनका कोई अपना राज्य नहीं है। हम प्रसन्नता पूर्वक आपकी अधीनता में आ रहे हैं। और फिर कभी फिर कभी सिर उठाने का साहस न करेंगे।'

रायदेवा—'आज ही पूर्णमासी का दिन है। वह किस समय 'वीर की दुहाई' लेने आता है ?'

मैना—'रात के समय वह अकेला ही आता है।

रायदेवा—'क्या तुम सब उस अकेले का भी सामना करने का साहस नहीं कर सकते ?'

मैना—'दूध का जला छाछ को फूंक फूंक कर पीता है। हम आपकी अधीनता में अधिक स्वतन्त्र और प्रसन्न थे। अब स्वतन्त्रता और प्रसन्नता दोनों को खो बैठे। मछली पहले पानी से निकली। तवे से उछलकर चूल्हे में जा गिरी। यह हमारा हाल हो रहा है। उसका सामना करने को तो हम शक्ति रखते हैं, परन्तु भय है कि अगर सफल नहीं हुये तो हमारी कुशलता कहाँ है। राय गंगो के पास एक अपूर्व तीव्र गामी घोड़ा है। एक दो को कौन कहे वह सैकड़ों आदमियों के जमघट से बचा लेता है। बिजली की कड़क की तरह वह इधर कड़क कर चमका और पल के पल में उधर जा निकला उसके रास्ते में नदी पहाड़, जंगल रुकावट नहीं बन सकते। वह इतना तीव्र है कि किसी शत्रु के हथियार उस पर और उसके कारण से उसके सवार पर चोट नहीं कर सकते।

रायदेवा—'बहुत अच्छा ! मुझे तुम्हारी सहायता स्वीकार है। मैं मैना को अपने हाथ से खोना नहीं चाहता था,

मैं अपने आपको इस खतरे में डाल दूंगा। वह जगह कहां है जहाँ वह आज तुमसे टैक्स लेने आयेगा ?'

मेंना—'हमारी वस्ती यहाँ से बहुत पास है। एक दो मील की दूरी समाप्त करने पर उसकी दीवार दिखाई देगी। वह हम आपको दिखा देंगे। उस दीवार पर गंगो का टैक्स थैलियों में बन्द करके रख दिया जाता है। वह अकेला आता है और स्वयं उठा ले जाता है।

रायदेवा—'तो मुझे भी उससे अकेला ही मिलना चाहिए क्यों कि सम्भव है कि भीड़-भाड़ को देखकर वह सामना न कर सके और मेंना को उसका फल उठाना पड़े।'

मेंना—'आपको इसका अधिकार है। अगर आपने गंगो के फन्दे से हमको छुड़ा दिया तो हम आपके बहुत ही आभारी होंगे।'

—०—

अट्ठाईसवाँ प्रकरण

रायदेवा और रायगंगो

सूरे से सूरा मिले, बाढ़ै प्रेम प्रतीत।
सूरे से कायर मिले, तुरतै टूटै प्रीत॥

रायदेवा ने वह मुख्य स्थान देखा जहां टैक्स के थैले रक्खे जाते थे। शाम के समय इसने दुर्गावती और अपने दूसरे साथियों को किसी गुप्त स्थान पर ठहरा दिया। नवयुवक मेंना को भी वहीं रहने की आज्ञा दी। आप हथियार बन्द होकर घोड़े पर सवार हुआ। हाथ में लम्बा भाला था। वह सफील पर गंगो के आने से पहले पहुंचा। थैलियों को

उठा लिया और उसकी राह देखने लगा।

गंगो अधिक रात बीतने पर वहां पहुँचा। देखता क्या है कि थैलियों का नाम निशान तक नहीं है। बड़ा चकित हुआ और उसके मुख से उच्च स्वर में निकल गया —"मुझ से पहले यहां कौन आया था। यह कभी सम्भव नहीं है कि रुपया यहां न रक्खा गया हो," अभी कठिनता से यह शब्द उसके मुख से निकले ही थे, कि रायदेवा उससे मुठभेड़ करने के लिये आ पहुँचा। "मैंने यहां से रुपये उठाये हैं। मेरे सिवा और कोई आदमी मेरा लोगों से टैक्स वसूल करने का अधिकार नहीं रखता।

गंगो ने भाला सम्भाला। रायदेवा ने उसका ज़बाब दिया। दोनों बलवान और लड़ाके थे। दोनों को बार खाली जाते थे। एक को दूसरे को घायल करने का अवसर हाथ नहीं आता था। दोनों के घोड़े बला के तेज और सवारों के भावों को भाँपने वाले थे। जब गंगो ने देखा कि भाला चलाने में उसका विपक्षी उससे कम नहीं है पैंतरा बदल कर कमर से तलवार निकाली और बिजली के कौंधे की तरह पीछे को और से दोवार पर झपटा। उसने तलवार चलाई। इसने रोका दोनों की तलवारें खटखट बीच से टूट गई तलवारों से ही लड़ने लगे। मगर एक दूसरे पर विजयी न हो सके। गंगो समझ गया कि विपक्षी इससे हुशियार और अधिक अनुभवी है।

विवश भागने का मार्ग टटोलने लगा मगर रायदेवा हर समय छाया की तरह मौजूद था। गंगो को जान बचाना कठिन हो गया। रामगढ़ का किला पूरब की ओर था। यह पहले दक्षिण की ओर दौड़ा फिर पूरब की ओर रुख

किया। वहाँ ऊँचे ऊँचे पहाड़ी टीले थे और इनके नीचे चम्बल नदी बहती थी। रायदेवा समझा—"वह अब कहाँ जाता है अभी मार लेता हूं। इस जगह वह अवश्य ठहरेगा और आमने-सामने की लड़ाई क्षण भर में फैसला कर देगी। कि कौन अधिक बलवान है और किसको असल में मेंनाओं से टैक्स लेने का अधिकार प्राप्त है।"

मगर गंगो वहाँ नहीं ठहरा। वह एक और ऊँचे टीले पर चढ गया। जिसके बिलकुल ही नीचे नदी बहती थी। चम्बल बहुत गहरी नदी थी। गंगो आगे आगे, रायदेवा पीछे पीछे। ऊँची चोटी पर पहुंच कर उसने घोड़े को कुदाया। घोड़ा और सवार दोनों पानी में गुम हो गये।

रायदेवा ने यह हालत देखी। स्वयं बहादुर सूरमा था। बहादुरी पसंद आदमी बहादुरों की वीरता देखकर प्रसन्न हो जाते हैं। इसे रंज हुआ। उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि डुबकी मारने वाले की किसी हालत में जान नहीं बच सकेगी और वह दिल ही दिल में अफसोस करने लगा। "दो मिनट पाँच मिनट दस मिनट बीते। देखता क्या है कि गंगो मय अपने घोड़े के पानी की सतह पर आ गया और देखते देखते दूसरे किनारे पर सही सलामत बचकर निकल गया।

रायदेवा ने आवाज दीं —"वाह! क्या कहना है तेरी वीरता का। जरा मुझे अपना नाम तो बता जा।" उसने जबाव दिया – मैं राव गंगो कीची हूं। तेरा क्या नाम है? तू भी तो वीर है। रायदेवा बोला—"मैं रायदेवा हाड़ा हूँ। तूने मेरा नाम सुना होगा। आज बजाय दुश्मन के हम दोनों भाईयों की तरह रहेंगे और वह चम्बल नदी हमारे अधिकारों की सीमा की दीवार समझी जायेगी। देखना अब

मेंनाओं को न सताना।" गंगो—स्वीकार है। तू भी मेरे कार्य में अब दखल न देना।"

देवा - "खुशी से स्वीकार है। कल बूंदी आकर मुझसे मिल जाना।"

गंगो उधर गया। रायदेवा वहाँ पहुँचा, जहाँ दुर्गावती और उसके साथी उसकी राह देख रहे थे। उसने पहुँचकर मेंना युवकों से कहा —"लो मुबारक हो। अब गंगो कभी तुमको न सतायेगा। यह टैक्स वापस ले जाओ। जिसने जो कुछ दिया सब उनको लौटा दो और मैं तुम्हारी स्वतन्त्रता को स्वीकार करता हुआ तुमसे समय समय पर सहायता का इच्छुक रहूँगा जिसको तुमने स्वीकार कर लिया है।"

मेंना धन्यवाद और नमस्कार के बाद अपनी राह गये। यह बूंदी आये। दूसरे दिन गंगो और जेठ दोनों रायदेवा से मिले। इनमें सदा के लिए संगठन हो गया और उस दिन से रायदेवा बूंदी में रहता हुआ और तरह का जीवन व्यतीत करने लगा।

—×—

उन्तीसवां प्रकरण

जीवन के अंतिम भाग का फल

जनम मरन दुःख याद कर, कूड़े कर्म निवार।
निज जिन पंचों चालना, सोई पन्थ सँवार॥
(कबीर साहब)

हरों (हाड़ों) की राजधानी बन गई। इसका क्षेत्रफल बहुत बड़ा हो गया। अब तक भी वह हाड़ों की राजधानी है

उसकी नींव सन् १३४२ ई० सम्वत् १३९८ विक्रमी में पड़ी थी। रायदेवा और दुर्गावती कई वर्ष तक आपस में प्रेम और सहानुभूति का आनन्द उठाया। अन्त में एक दिन बूंदी में शाही महल के पास एक साधू आ निकला, जिसकी सूरत से देवी प्रकाश बरसता था। रायदेवा उससे मिला। पूछा "आप कहाँ से आये हैं? उसने उत्तर दिया —"काशी से" कहाँ का इरादा है" "कहीं का नहीं। मौज ने यहां पहुँचाया अपने हंसों के चिताने के लिये इस जगह आया हूँ।"

"आप कौन हैं? क्या नाम है?"

"जुलाहा हूँ। लोग इस शरीर को कबीर कहते हैं।"

मैंने मुसलमानों से आपका नाम सुन रक्खा था। धन्य है। आज दर्शन भी हो गया। क्या आज्ञा है?'

'मैं तुम्हारे ही लिए यहाँ आया हूँ। समय निकट आ रहा है तुम्हारे मित्र सोलंकी राजा को चिता दिया उसने तुमसे मिलकर अनुचित काम किये थे। अब गुजरात देश से सोलंकियों का नाम निशान मिट जायगा। अत्याचार की उम्र अधिक नहीं होती। राजा भक्त हो गया। उसने और उसकी रानी ने अपना वंश कायम रखने की प्रार्थना की। मेरे आशीर्वाद से मेरा अंश रानी के गर्भ से उत्पन्न हुआ।'

बाघ जैसी शकल! माँ बाप ने भय और घृणा के कारण से बच्चे को जंगल में फेंक दिया। मेरा उधर से आना हुआ रोते हुए बच्चे को गोद में उठा लाया। उनको इस दुर्व्यवहार पर भला बुरा कहा। वह लज्जित हुए। मैंने इस लड़के का नाम व्याघ्र देव रक्खा। उसे बाँधोगढ़ (रीवाँ) का राज दिया अब यह सोलंकी न कहलायेंगे, किन्तु बघेल कहलायेंगे और ब्यालीस पीढ़ी तक बघेलियों की सन्तान दुनियाँ में रहेगी।

यह मेरी दुनियाँ की सन्तान है जो हुकूमत करेगी। मेरी आत्मिक सन्तान धर्मदास धनी से चलेगी। वह भी ब्यालीस पीढ़ी तक काम करेगी। मालिक की इच्छा ऐसी ही है, अब मुझ तुम्हारे चिताने का ख्याल है। यह भावना मुझको लाई है।'

'फिर मेरे लिए क्या आज्ञा है ?'

'पहाड़ पर चम्बल नदी के किनारे चलो; मैं तुमको उपदेश दूंगा। तुमने व्यर्थ मेंनाओं पर अत्याचार किया। उनका प्रायश्चित आवश्यक है। तुम कौम के शत्रु बनकर नहीं आये थे मगर अहंकार और गलती में आकर तुमने शत्रुता की। इस अपराध का बदला देना जरूरी है। नहीं तो हाड़ों की सन्तान का संसार से अन्त हो जायगा।'

फकीर की सूरत से तप और तेज का प्रभाव प्रगट हो रहा था। रायदेवा जैसा सूरमा राजपूत उसके प्रभाव में आ गया। बोला 'हाजिर हूँ।' उसने कहा—'अब मेरे साथ चलो।'

दोनों साथ हो लिये। रानी से भी न रहा गया। वह भी उनके पीछे चली। इन तीन के सिवाय और कोई चौथा आदमी उनके साथ नहीं था।

ये पहाड़ के ऊपर पहुँचे। तीन भारी शिला पड़ी हुई थी। कबीर साहब ने आज्ञा दी —'इनको उठा लो और मेरे पीछे-पीछे जल्दी-जल्दी चले आओ।' रायदेवा ने क्रमशः उनको उठा लिया, साथ चला, मगर शिला भारी थी पैर उठाना कठिन था।

उसने कहा—'हुजूर! सर पर बोझ भारी है। चलना कठिन है।' अच्छा! 'एक शिला फेंक दो।' उसने एक को

फेंक दिया। उसने चार कदम चलकर फिर शिलाओं के भारी होने की शिकायत की। अच्छा! दूसरी भी फेंक दो।' उसने ऐसा ही किया। दस-बीस कदम चलने पर फिर बोला—'सर पर बोझ लेकर चलना आसान नहीं है।' बहुत अच्छा! तीसरी भी फेंक दो।' उसने ऐसा ही किया और फिर हल्का होकर फकीर के साथ हो गया। दुर्गावती हैरान थी कि यह क्या हो रहा है।' मगर मुँह से बोल न सकी। रायदेवा कुछ इस साधारण साधू के इतने प्रभाव में आ गया कि उसका मन और वाणी उसके नहीं रहे थे। पता नहीं इस साधू में क्या शक्ति थी जिसने उस जैसे वीर को भी अधीन कर लिया था।

तीनों पहाड़ की चोटी पर पहुँचे। कबीर साहब आसन मारकर बैठ गये। इसे भी बैठने की आज्ञा दी, वह बैठ गया। उन्होंने कहा—रायदेवा! सर पर बोझ लेकर पहाड़ पर चढ़ना कठिन था। देखो बोझ के उतर जाने से तुम किस प्रकार हलके हो गये। समझो मनुष्य के तीन कर्म—क्रियमाण संचित और प्रारब्ध, यह उसके जीवन के बोझ हैं। उसके तीन शरीर —स्थूल, सूक्ष्म और कारण भी बोझ हैं और गुण —सत, रज और तम को भी ऐसा समझलो। जब यह सर से उतर जाते हैं, तब आदमी हल्का होकर ब्रह्मरेन्द्र पर्वत की चोटी पर जा सकता है। इससे पहले सम्भव नहीं हैं। अब तुमको अपने अन्दर के पहाड पर चढ़ाई करना होगा। तिल की ओट पहाड़ है। नाक की सीध में चलना होगा तब ब्रह्म-रेन्द्र की चोटी पर पहुँचना होगा।'

रायदेवा ने कहा—'हुजूर मैंने यह रहस्य नहीं समझा।,

कबीर साहब ने उत्तर दिया—'राजन! मैं तुम्हें समझाने

के लिये लाया हूँ। तिल तुम्हारी दोनों आँखों के पीछे है। वह तीसरी आँख है वह रुद्र नेत्र है। शिव नेत्र और तीसरा तिल कहलाता है, सूफी इसको नुक्तये सवेदा कहते हैं। तुमको इस शिव नेत्र में आसन जमाकर बैठे-बैठे ब्रह्मरेन्द्र शिखर पर चढ़ना होगा। वह चोटी इसी तिल की ओट में है और उसका रास्ता नाक की सीध में है। स्त्रियाँ नाक पर कंघी जमाकर मांग निकालती हैं। यही माँग सीधा रास्ता है। उसका अन्तिम स्थान उस जगह है जहाँ हिन्दुओं की चोटी होती है, जो मनुष्य की शारिरिक व्यवस्था में कुल नस नाड़ियों का केन्द्र है उसी जगह पहुँचने का साधन बताया जाता है। यह रास्ता सुषुम्ना नाड़ी है इसी से होकर अब तुमको ऊपर चलना होगा।'

रायदेवा—'हुजूर ! यह क्या साधन है ?

कबीर—'इसका नाम सुरत शब्द योग है। यह योग का बहुत ही सरल मार्ग है। तुमने जीवन में बड़ी खेंचतान की है। कर्म करने से तुम्हारा हृदय विशाल, दृष्टि ऊँची और स्वभाव भी ऊँचा हो गया है। तुम सरलता से अभ्यास करते हुए विचार को एकाग्र करके उस पर बिना पैरों के ही चढ़ जाओगे। बिना जिभ्या के ही अपने भीतर अनहद राग सुनोगे। बिना सूर्य के प्रकाश के दृश्य देखोगे। इनमें तुम्हारा दिल अपने आप एकाग्र, प्रसन्न और सन्तुष्ट होता जायेगा। यद्यपि तुमने बहुत से अनुचित कर्म किये हैं। मगर उनके प्रभाव भी अपने आप नाश हो जायेंगे और तुम मनुष्य जन्म को सुफल कर लोगे।'

रायदेवा ने प्रसन्नता से इस अभ्यास को सीखने की स्वीकृति प्रगट की। कबीर साहब ने उसे दीक्षा दी। अपना

शिष्य बनाया, साधन सिखाया, सामने बिठाकर अभ्यास कराया। कुछ क्षण में ही उसकी सुरति दिमाग की ओर आकर्षित हो गई। उसी दिन उसने अध्यात्मिक ज्ञान के दृश्य देखे। आधे घटे तक वह निश्चल बैठा रहा। जब होश में आया कबीर साहब उसकी हालत देखकर प्रसन्न हो गये और प्रसन्नता में आकर यह राग गाकर सुनाया :—

(१) भाग जगा गुरु सन्मुख आये, भव का फंद कटाया हो।
सोया मनुआं जनम जनम का, दया से अपनी जगाया हो।

(२) गूंगा बोले मधुरी वाणी, लूला शिखर चढ़ाया हो।
अंखियां उलट जो तिल को बींधा, दृश्य अनूप दिखाया हो।

(३) बिन बादल पानी की धारा, रिमझिम रिम बरसाया हो।
अमी बूंद स्वाद रस मीठा, चढ़धर अधर पिलाया हो॥

(४) बिना नयन के मोती पोहे, बिन सुर शब्द सुनाया हो।
तिल की ओट ब्रह्मरेन्द्र चोटी, नाक की सीध चलाया हो॥

(५) जगमग ज्योति की महिमा भारी, सूरज चांद लजाया हो।
शब्द अनाहद अन्तर जागा, सुन सुन मन हरषाया हो॥

(६) सहस कमल दल पार ठिकाना, त्रिकुटी ओम बताया हो।
बादल गरजे बिजली चमके, धुन मृदग लौ लाया हो॥

(७) सुन्न महासुन्न मानसरोवर, अमृत कुण्ड नहाया हो।
काग से सुरत भई अब हंसा, मोती ज्ञान चुगाया हो॥

(८) भँवर गुफा में मुरली बाजी, सोहं नाद मचाया हो।
खिड़की खोली झिलमिली दरसी, मन सत पद ठहराया हो

(९) बीन बजे जहां सत् सत हकहक, कर्म का भाव मिटाया हो
भव दारुण से बचकर भागा, सत्त नाम धन पाया हो॥

(१०) कहे कबीर भेद की बातें, बिरला कोई समझाया हो।
समझ बूझ जो घट में आवै, ताहि यह पंथ लखाया हो ।।

रायदेवा की दशा बदल गई, आँखें लाल हो गयीं पैरों पर गिरा। 'भगवन ! तुम धन्य हो। तुम्हारी लीला अपरंपार है। अब यह आज्ञा हो कि मैं सेवक की हैसियत में आप के साथ रहूँ।'

अभी कबीर साहब ने उसके इस सवाल का उत्तर नहीं दिया था कि दुर्गावती को समय मिल गया। फिर वह चरणों में गिर पड़ी और पैर पकड़ लिए। महाराज ! अगर मेरा पति मुझसे छीन लिया गया तो फिर मैं कहीं की भी न रही। मेरा भी उद्धार कीजिये।

कबीर साहब मुस्कराये 'महारानी मैं तेरे पति को इस जन्म में तुझसे अलग करने को नहीं आया, परन्तु तू अगर इसके साथ रहने को इच्छुक है तो तू भी इस साधन को सीख ले और स्त्री पुरुष दोनों आज से इसी कमाई में लग जाओ। उसने स्वीकार किया कबीर साहब ने उसे भी साधन सिखाया उसकी भी समाधि लग गई। जब वह होश में आई, रायदेवा ने सवाल किया —'अब क्या आज्ञा है ?'

कबीर साहब बोले— तुम्हारे पिता ने भूलोक के बादशाह के दरबार में भेजा था। मैं तुम्हें आकाशी बादशाह के धाम को भेजना चाहता हूँ। तुमको आज से बूंदी से भी देश निकाला दिया जाता है। अब तुमको बूंदी में रहने की आज्ञा नहीं है, नहीं तो तुम्हारे पुराने मन के संस्कार फिर से जाग्रत हो जायेंगे, और तुमसे परमार्थ की कमाई न हो सकेगी।'

रायदेवा—'सत् बचन ! महाराज की जो आज्ञा है वह

सर आँखों पर।' ये तीनों आदमी अभी पहाड़ी पर थे कि राजकुमार समरसी कुछ अहलकारों के साथ उनकी खोज में वहाँ आ पहुंचा। रायदेवा ने उससे आकर्षित होकर कहा—'बेटे! बमोदा का राजा तेरा बड़ा भाई हरराज बनाया गया था आज से तू बूंदी का राजा बनाया जाता है। सत्गुरु की आज्ञा है —'मैं अब बूंदी न जाऊँ इसलिये मजबूरी है।'

कबीर साहब ने समरसी का राज्य तिलक मिट्टी से किया और उसे विदा करके रायदेवा और दुर्गावती को साथ लिये हुए अमरथूना गाँव में आये। यहाँ ही दोनों बहुत समय तक योग के साधन में रहे। इतिहास साक्षी दे रहा है कि फिर जीते जी वह न बमोदा गये और न बूंदी की चार दीवारों में पग रक्खा। कबीर साहब उन दोनों को चिताकर काशी की ओर चले गये और रायदेवा और दुर्गावती दोनों ने परमार्थ की कमाई करते हुए अमरथूना ही में प्राण और प्राण के साथ शरीर का त्याग किया। यह इनके जीवन का परिणाम हुआ और यह परिणाम कैसा धन्य हुआ। धन्य हैं वह लोग जिनका इस जन्म में सत्गुरु मिल गये हैं। अब वह कभी संसार सागर में गोते न खायेंगे।

यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान।
सीस दिये जो गुरु मिलें, तो भी सस्ता जान॥
वस्तु कहीं ढूढ़े कहीं, केहि विधि आवे हाथ।
कहें कबीर तब पाइये, जब भेदी लीजै साथ॥
भेदी लिया साथ कर, दीनो वस्तु लखाय।
कोटि जन्म का पंथ था, पल में पहुचा जाय॥

॥ इति ॥

समझ का फेर

मुसलमान कहते हैं कि नर्क एक भयानक अग्नि-कुण्ड है, उसमें पापी लकड़ियों की भाँति जलते रहते हैं। एक और मत वाले हैं जिन का विश्वास है कि नर्क ऐसा ठण्डा स्थान है कि जहाँ मनुष्य मारे सर्दी के पत्थर की तरह अकड़ जाता है, हिन्दू कहते हैं कि नर्क में महा दुर्गन्धि है और अपावन वस्तुयें हैं। यह नर्क के तीन विचार हैं, जो संसार के तीन धार्मिक सम्प्रदाय हमारे दृष्टिगोचर करते हैं। अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि सत्य क्या है ? पहला उत्तर तो यह है।

दोहा—दुःख सुःख यम यातना, भय अरु दण्द अदण्ड।
ज्ञानी घट में देखही, तीन लोक ब्रह्माण्ड ॥१॥
(वाचस्पति देव कवि जी)

दूसरा उत्तर यह है कि उन मनुष्यों का मत जिनको अध्यात्मिक उन्नति का अवसर नहीं मिला उनके इर्द गिर्द के हालात की गाड़ी और घनो तस्वीर होता है। अरब का देश रेगिस्तान है, वहाँ लू चलती रहती है वृक्ष सूख जाते हैं। मनुष्य गर्मी के कारण मरजाते हैं इसलिये अर्बी लोगों ने उसी सदृश्य नर्क की कल्पना करली। नार्वे और स्वीडन देशों में बड़ी सर्दी पड़ती हैं इसलिए उन्होंने नर्क की ऐसी कल्पना की की कि वहाँ अत्यन्त सर्दी पड़ती है। गर्मी वहाँ प्यारी लगती है। भारतवर्ष में गर्मी, सर्दी दोनों सामान्य अवस्थाओं में होती हैं। अतएव हिन्दू दिन में दो बार नहाते थे, वस्त्र शुद्ध और पवित्र रखते थे चौका देकर खाते थे। इनके निकट नर्क वह स्थान है जहाँ अत्यन्त अपवित्र और दुर्गन्धि हो इसी प्रकार इन तीनों सम्प्रदायों ने बैकुन्ठ का भी प्रथक प्रथक

वर्णन किया है। समझने वाले सुगमता से समझ सकते हैं कि मतवादियों के विचारों की जड़ में इर्द गिर्द के प्रभाव और रहन सहन इत्यादि कितने अंश तक घूसे रहते हैं।

एक अफीमची से किसी ने कहा भाई! तुम कोई पाप नहीं करते इसलिए बैकुण्ठ में जाओगे। अफीमची ने पूछा बैकुन्ठ में अफीम खूब मिलेगी कि नहीं? और तम्बाकू पीने के लिए आग भी खूब मिलेगी या नहीं? उसने उत्तर दिया— बैकुन्ठ में अफीम, तम्बाकू जैसी घृणित वस्तुयें नहीं होती। अफीमची ने नाक सिकोड़ कर कहा—"छिः हम ऐसे बैकुन्ठ में जाकर क्या करेंगे।'

तात्पर्य जिनको अपने आत्मा की उन्नति का ध्यान हो। उनकी दृष्टि ऊँची होनी चाहिए जिससे असलियत की भी कुछ खबर मिले।

—o—

तत्व विचार

पक्षपात बुरा है—एक मनुष्य शिवजी का बड़ा भक्त था और सिवाय शिव के और किसी को कुछ नहीं समझता था। एक दिन शिवजी ने उसको दर्शन देकर कहा कि तू पक्षपाती और संकीर्ण हृदय बनेगा तो मैं बहुत अप्रसन्न हूँगा। वह चुप रहा, कुछ दिनों के पीछे श्री शिवजी ने फिर दर्शन दिया इस बार आधा शरीर शिव का और आधा विष्णु का था वह मनुष्य को देखकर तो प्रसन्न हुआ परन्तु विष्णु रूप से बड़ा क्रोधित हुआ, यह देखकर शिवजी बोले तू बड़ा हठी और संकीर्ण हृदयी है। मैंने यह रूप इसलिये धारण किया था कि

तू समझ सके कि संसार में जितने देवी देवता हैं सब मेरे ही रूप हैं परन्तु तू ने नहीं समझा और मेरा निरादर किया इसका तुझे दण्ड मिलेगा। इसके पश्चात वह एक गाँव में आया, वहाँ लोगों को पता लगा कि वह विष्णु का द्रोही है लोग उसको चिढ़ाने के लिये विष्णु विष्णु कहने लगे। अपने दोनों कानों में घन्टे लटका लिए ताकि उनका शब्द सुनाई न दे परिणाम यह हुआ कि उसका नाम ही घन्टा कर्ण पड़ गया।

तात्पर्य—मनुष्य को पक्षपाती और दुराग्राही न बनना चाहिए, समझ बूझ और विवेक से काम लेना चाहिए।

दोहा— गुरु पशु नर पशु, त्रिया पशु वेद पशु संसार।
मानुष सोई जानिये, जाहि विवेक विचार॥
(कबीर साहब)

कर भला हो भला—एक चोर रात्रि के समय किसी राज महल में चोरी करने गया और उसने राजा को अपनी रानी से यह कहते हुए सुना कि मैं अपनी पुत्री का विवाह साधू से करूँगा। चोर यह सुनकर विचारने लगा अवसर बहुत अच्छा है, कल ही मैं साधू का भेष बना लुँगा कदाचित् राजा मेरे ही साथ अपनी कन्या का विवाह कर दे। वह उसी समय वहाँ से चला गया और प्रभात होते ही साधू भेष बना कर मन्डली में जा बैठा, इतने में राजा के नौकर भी साधुओं के पास आये और बोले राजा अपनी राजकुमारी का विवाह किसी साधू के साथ करना चाहता है यदि आप में से कोई विवाह करने का इच्छुक हो तो अपनी इच्छा प्रगट करें ताकि हम राजा को सूचना दें। और साधुओं ने तो इनकार कर दिया परन्तु चोर चुप रहा उसने कुछ उत्तर न दिया, नौकरों ने राजा के पास जाकर कहा कि कोई साधू राजी नहीं केवल

एक युवा साधू है जिसने कुछ उत्तर नहीं दिया कदाचित राजी हो जाय। इस पर राजा आप उसके पास गया और कहा—'यदि आप मेरी पुत्री के साथ विवाह कर लें तो बड़ी कृपा होगी।' चोर ने अपने मन में सोचा देखो बनावटी साधू होने का यह फल मिला कि स्वयं राजा मेरे पास चला आया और हाथ बांध कर मुझसे निवेदन कर रहा है यदि मैं सच्चा साधू हो जाऊँ तो कितना भला होगा, यह सोचकर उसने विवाह करना छोड़ दिया और मन को शुद्ध करने लग गया और कुछ दिनों पीछे वह अच्छा संत बन गया।

तात्पर्य—अच्छी बात चाहे किस प्रकार से करो उसका फल अच्छा ही मिलेगा।

झूठा विरक्त—एक दिन आज कल का नई रोशनी वाला एक गृहस्थी मनुष्य विरक्त पाने की बात कर रहा था उसकी बातें सुनकर भगवान रामकृष्ण जी ने कहा आजकल के गृहस्थी विरक्त ऐसे होते हैं कि धन को अपने पास नहीं रखते जो कुछ कमाते हैं वह स्त्री को दे देते हैं और कहते हैं कि हमको रुपये से कोई प्रयोजन नहीं! प्रयोजन क्यों हो काम-काज और रुपया आदि तो सब स्त्री के अधीन है।

एक दिन कोई भिकारी ऐसे विरक्त के पास माँगने आया गृहस्थी विरक्त ने कहा मैं पैसे को कभी नहीं छूता तू यहाँ से चला जा, पर भिकारी न गया। वहाँ ही खड़ा रहा। गृहस्थी विरक्त ने सोचा कि इसको एक रुपया दे देना चाहिए फिर उससे कहा—'कल को आना यदि हो सकता तो कल कुछ दे दूंगा। यह सुनकर वह चला गया। गृहस्थी विरक्त ने अपनी स्त्री से कहा यह ब्राह्मण बड़ा दुःखी है इसका एक रुपया दे दो। स्त्री ने झुन्झलाकर कहा तुम बड़े दानी बन गये हो,

रुपया न हुआ कङ्कड़ पत्थर हुआ जहाँ चाहा वहाँ बिना सोचे समझें फेंक दिया। पति ने बड़ा अनुनय विनय की तब स्त्री ने कहा अच्छा एक दोअन्नी ले लो और उसको दे दो पति ने विवश होकर दोअन्नी ले ली। दूसरे दिन जब भिखारी आया तो उसको रुपया के स्थान में दो आने हवाले किये, गृहस्थी विरक्तों की ऐसी दशा होती है।

दोहा—जग में भक्त कहावही, चटकी चून न देय।
शिष्य जोरु का हो रहा, नाम गुरु का लेय॥

दृष्टान्त—एक साधू ने देखा कि किसी मनुष्य की बारात बड़ी धूम धाम से जा रही है। सड़क पर तिल धरने का स्थान नहीं है सड़क के किनारे एक शिकारी गुलेलों को लिये हुए चिड़ियों पर निशाना जमा रहा था उसका ध्यान कुछ ऐसा जम गया था कि बारात के आने जाने की उसको कुछ खबर तक नहीं हुई। न बाजे की आवाज को सुना, साधू ने दृश्य को देखकर कहा यह शिक्षा तुमसे मैंने सीखी जैसे तेरा इस काम में ध्यान है वैसा भी मेरा ध्यान भी ईश्वर में लगे।

पुरुषार्थ को महिमा—एक संतोषी मनुष्य बेकार रहता था महात्मा रामकृष्ण जी ने उससे प्रश्न किया कि कुछ उद्यम क्यों नहीं करता। उसने उत्तर दिया कि ईश्वर की कृपा के बिना कुछ नहीं हो सकता। इस पर परम हंस जी ने कहा कि ईश्वर की दया की वायु हर समय बहती रहती है यदि तू चाहता है कि भवसागर से पार हो जाय तो अपनी नौका (किश्ती) के पाट खोल दे, परमात्मा की कृपा की वायु उसे बहा ले जायगी।

तात्पर्य—ईश्वर की कृपा उसी समय पूरी पूरी होती है

जब मनुष्य उसके ऊपर पूरा भरोसा करके परिश्रम करता है और सिवाय उसके और किसी और किसी का सहारा नहीं रखता।

आगे बढने से लाभ—एक गरीब लकड़ी बेचने वाला जंगल से लकड़ियाँ काट कर लाता था और शहर में बेचा करता था। उसको देखकर एक सिद्ध महात्मा को दया आई उसने कहा 'तू एक ही स्थान में क्यों लकड़ी काटता रहता है आगे बढ़ता जाया कर'' उसने सिद्ध'की बात मान ली दूसरे दिन वह आगे बढ़ा वहाँ एक चन्दन का वृक्ष मिला उसको बेचकर उसे बड़ा लाभ हुआ। अगले दिन वह और आगे बढ़ा, वहाँ उसको ताँबे की खान मिली, अगले दिन महात्मा के कथनानुसार वह फिर आगे बढ़ा वहाँ उसे सोने चाँदी और हीरों की खानें मिलीं और वह बड़ा धनवान हो गया।

तात्पर्य—यही अवस्था अध्यात्मिक ज्ञान के अभिलाषियों की होता है उनको भी रात दिन आगे से आगे बढ़ने की धुन होनी चाहिए आगे बढने से उनको सबकुछ मिल जाता है।

गृहस्थी की ईश्वर भक्ति—एक बार नारद मुनि जी के हृदय में अभिमान हुआ कि मेरे समान कोई मनुष्य ईश्वर का भक्त न होगा। विष्णु भगवान ने नारद जी से कहा कि तुम अमुक किसान के पास जाकर देखो कि वह कैसा मेरा भक्त है। नारद जी उसके पास गये और देखा कि वह साधारण किसान है जो प्रातःकाल परमेश्वर का नाम लेकर उठता है। और रात्रि काम काज से थक कर ईश्वर का नाम लेकर सो जाता है। नारद ने अपने मन में यह विचारा कि कैसे परमेश्वर का भक्त हो सकता है? सारा दिन अपने काम-काज में लगा रहता है। यह कभी भक्त नहीं हो सकता, नारद

जी विष्णु के पास लौट गये। विष्णु ने पूछा तुमने किसान को कैसा पाया, नारद जी ने उत्तर दिया 'महाराज! मैंने तो उसमें कोई भक्ति के लक्षण नहीं देखे।' तब भगवान ने एक कटोरा तेल का भरा हुआ दिया और कहा— तुम इसको लेकर नगर के प्रत्येक गली कूचों में घूमो और सन्ध्या को मुझसे मिलो परन्तु स्मरण रहे कि इसमें से एक बूंद भी धरती पर न गिरने पावे।' नारद जी ने वैसा ही किता और सन्ध्या को जब वह विष्णु भगवान के पास लौट कर आये तो उन्होंने पूछा कि तुमने सारे दिन में मुझे कितनी बार स्मरण कि? नारद जी ने कहा —'एक बार भी नहीं किया, मेरा ध्यान कटोरे पर था आपको कैसे स्मरण करता।' विष्णु भगवान बोले देखो नारद! एक तेल के कटोरे के हाथ में लेने से तुम्हारी यह दशा हुई कि तुम मुझको एक बार भी स्मरण न कर सके सर्वथा भूल गये परन्तु यह किसान अपने सारे परिवार का बोझा अपनी गर्दन पर रखते हुए भी मुझे सांय-प्रातः स्मरण करता है वह कितना भक्त है, नारद जी समझ गए।

तात्पर्य—जो गृहस्थी सायंकाल सच्चे मन से ईश्वर का ध्यान करते हैं वह उसकी भक्ति कमाने से वंचित नही रहते।

माया से बचन का साधन—एक जहाज के मस्तूल पर एक चिड़िया बैठ गई, जब जहाज समुद्र के बीच में पहुँचा तो उसके मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि मैं इस मस्तूल पर बैठे-बैठ कब तक काटूँगी? मुझे हरा पेड़ वा जंगल मिल जाय तो कहीं चली जाती। यह सोचकर चिड़िया मस्तूल पर से उड़ी और कई मील तक पूरब की ओर गई पर कहीं

धरती का पता न मिला, फिर पश्चिम की ओर गई वहाँ भी धरती दिखाई न दी, फिर दक्षिण और उत्तर की ओर गई। उधर भी यही दशा रही, जब वह उड़ते-उड़ते थक गई तब फिर उसी मस्तल पर आ कर बैठ गई और निश्चय कर लिया कि अब मैं यहां से कहीं न जाऊँगी। उसी दिन से उसमें शान्ति आ गई और सुख से रहने लगी।

तात्पर्य—इसी प्रकार जब शिष्य सच्चे गुरु के मन्त्र और उपदेश से ईश्वर का निश्चय कर लेता है तो माया के अनन्त समुद्र को पार कर जाता है।

एक बूढ़ा जापानी कारीगर—किंचित वर्ष बीते कुछ यूरोपीयन दर्शक जापान में सैर कर रहे थे, उनका गुजर एक कारीगर की दुकान पर हुआ जो हाथी दांत का काम करता था। यात्रियों ने एक हाथी दाँत को पसन्द किया, जिस पर बड़ी निपुणता से काम किया हुआ था। दर्शकों के पूछने पर कारीगर ने उसका मूल्य १३०/- रु० बताया, जो वास्तव में उचित था। और एक दर्शक ने उसके मोल लेने की इच्छा प्रगट की, परन्तु पूर्व इसके कि वह दर्शक उसे मोल ले उक्त कारीगर ने एक बार फिर उस वस्तु को ध्यान पूर्वक देखा और चित्रकारी में कोई दोष पाकर ग्राहक को सूचित किया। ग्राहक ने उसकी परवाह न की वरन् उसने कहा कि इससे इसके मूल्य में कोई कमी नहीं आती और सिवाय तुम्हारे जसे चतुर कारीगर के और कोई इस दोष को जान भी नहीं सकता। कारीगर ने कहा कि कीमत को कुछ परवाह नहीं परन्तु इस दुकान से कभी इस प्रकार का माल नहीं दिया जाता जिसमें किंचित भी दोष हो मैं अब यह हाथी दाँत तुम्हारे हाथ नहीं बेचूँगा।

क्या हमारे देश में भी इस विचार के कारीगर हैं ?

इस घटना पर अपनी ओर से लिखना व्यर्थ है, पाठक स्वयं परिणाम निकाल लें।

[पृष्ठ नं० ८ से आगे]

तेरा, मेरा क्या सम्बन्ध है ? हनुमान ने कहा, महाराज शरीर से मैं आपका दास हूँ, शरीर आपकी सेवा में रहेगा, जीव की दृष्टि से मैं कहाँ से आया हूं, मैं आपका अंश हूँ और आत्मा की दृष्टि से मैं हूँ ही नहीं, तुम ही हो, मैं शरणागत हूँ। मानव को पूर्णता प्राप्त करने के लिये शरीर, मन और आत्मा तीनों के स्वभाव के मुताबिक व्यवहार करना चाहिए, शरीर भौतिक है और भौतिक जगत् में या मादा में हमेशा गति या चाल रहती है इसलिए शरीर को साधना है जो अपने आपको सेवा के कर्म में लगा दो। यदि हमारा कर्म दूसरे की भलाई के लिये होगा और उसमें हमारा स्वार्थ किसी दूसरे को हानि पहुँचाने के लिए नहीं होगा तो वो कर्म निष्काम हो जाने की वजह से हमें बाँधेगा नहीं इसलिए सन्तमत में निष्काम करने की सम्मति दी गई। मन या चित् का स्वभाव सोचना, विचार करना है। जिस प्रकार सेवा करने से शरीर शुद्ध होता है, उसी प्रकार शुभ संकल्प से मन या चित शुद्ध होता है। मन का सम्बन्ध हमारे भावों से है ! यदि हम सद्भावना से अपने को प्रेममय बनाकर किसी के दुर्भावना रखें तो हमारा मन पवित्र हो जाने के कारण न तो स्वयं दुःखी होगा न दूसरों के दुःख का कारण बनेगा। भक्ति मार्ग के द्वारा मन इतना शुद्ध हो जाता है कि वह हर वस्तु में मालिक को देखता है। यह दृष्टि भक्त को प्राप्त

होती है इसी को समदृष्टि भी कहा गया है।

स्वामी रामतीर्थ ने अपने अनुभव के आधार पर इस अवस्था को प्राप्त करने के बाद लिखा :—

"जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है
कि हर शै में जलवा तेरा हू बहू है।"

मैंने इसी विचार को और इसी पद्य को पढ़ने और समझने के बाद अपने अनुभव के बाद यह लिखा था —

"वही नर जहाँ में सुखी है निरन्तर।
कि दिन रात जिसको तेरी जुस्तजू है॥
तू है सबका स्वामी तू है सबका दाता।
जो हो जाये तेरा उसी का हो तू है॥
जो सबको तुम्हीं में तुम्हें सब में देखे।
वो आशिक है तेरा और माशूक तू है॥"

पहले पद्य का मतलब साफ है। संसार में जो व्यक्ति लगातार मालिक से प्रेम करता है और उसी को तलाश कर रहा है तो वह कभी दुःखी नहीं हो सकता। वह हर अवस्था हर समय और हर घटना में ईश्वर की इच्छा को ही स्वीकार करेगा और मौजेमालिक पर रहेगा। वह दुःख में दुःखी नहीं होगा और सुख में जरूरत से ज्यादा प्रसन्न नहीं होगा। दाता दयाल जी महाराज ने इसी भावना को व्यक्त करते हुए लिखा है—

हर शै में कारसाज उसी एक खुदा को देखे।
शैतां भी पास आये तो उसमें खुदा को देखे॥

इसी प्रकार दूसरे पद्य में ये स्पष्ट किया गया है कि मालिक ही एक मात्र स्वामी है और आत्मा राधा है। जब आत्मा अपने आपको पूर्णतया मालिक के सुपुर्द कर देता है

ता मालिक खुद आत्मा का मार्ग दर्शन कराता है। तीसरे पद्य में यह बताया गया है कि परमतत्व आधार का अंश सब जगह है और सब व्यक्तिया में है यही राधास्वामी हालत है। जब साधक द्वेत भक्ति से ऊपर उठाकर पराभक्ति की हालत पर पहुँच जाता है, उसको सब जगह परमतत्व ही दिखाई देता है। इस अवस्था को पाकर ही साधक सच्चा भक्त बन जाता है।

आत्मा का स्वभाव आनन्द है और आत्मा प्रकाशमय कारण शरीर है इसलिये आत्मा की खुराक अन्तर्दृष्टि है। सुमिरन, ध्यान भजन में तीसरे नेत्र पर ध्यान लगाने का और अन्दर में प्रकाश अनुभव करने का विधान इसीलिये है। सक्षेप में शरीर मन और आत्मा को निष्काम कर्म, भक्ति और ध्यान में लगाने से मनुष्य का सत् चित् और आनन्द सच्चिदानन्द में बदल जाता है।

क्रोध से बचने के उपाय

क्रोध से बचने का स्थायी और वास्तविक उपाय तो यही है कि हम क्रोध के कारण को मालूम करने की कोशिश करें। क्रोध का अ रम्भ या तो मूर्खता से या दुर्बलता से अथवा मानव स्वभाव से अनभिज्ञता के कारण होता है। जब कोई व्यक्ति हमारा कहना नहीं मानता या हमारी इच्छा के विरुद्ध काम करता है तो हम आपसे बाहर हो जाते हैं और उस पर बेतहाम बरस पड़ते हैं। हम यह समझने की तकलीफ ही नहीं करते कि हमें दूसरों को अपने इच्छानुसार चलाने का क्या अधिकार है। हम अपने प्रतिदिन के अनुभवों से भली प्रकार जान सकते हैं कि प्रत्येक मनुष्य की वृत्ति दूसरे मनुष्यों से भिन्न होती है।

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क – राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

७ – मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ नव०, १९८७

सुधा मित्तल

प्रकाशक के हस्ता

Regd. NO L—ALG.28

मिलने का पता :—
'मनुष्य बनो' कार्यालय
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़—२०२००१ (उ० प्र०)

अवैतनिक सहायक सम्पादक
महेशचन्द्र मीतल
सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक
श्रीमती सुधा मीतल

ग्राहक संख्या— 170

श्रीमान् Chilwar Narsimhlu
General Hanmanthu Stores
Vt Po: Banswada Mandal
Nizamabad

(27)

२१९६

~~7/8~~

7/94

9/94

6/81

9/81

1/91

11/91